बनते-संवरते विचारों के वैज्ञानिक वाइसमैन

डॉ. सुशील जोशी

उन्नीसवीं सदी के एक वैज्ञानिक हुए हैं फ्राइडरिश लियोपोल्ड ऑगस्ट वाइसमैन (1834-1914) जिन्हें उन्नीसवीं सदी में डार्विन के बाद दूसरा सबसे उल्लेखनीय जैव विकास सिद्धांतविद कहा जाता है। दरअसल वाइसमैन वे पहले जीव वैज्ञानिक थे जिन्होंने डार्विन के जैव विकास सिद्धांत का उपयोग विभिन्न जीव वैज्ञानिक परिघटनाओं की व्याख्या हेतु किया था। साथ ही, यह भी उल्लेखनीय है कि वाइसमैन ने डार्विन के कई विचारों को ज़बर्दस्त चुनौती भी दी थी।

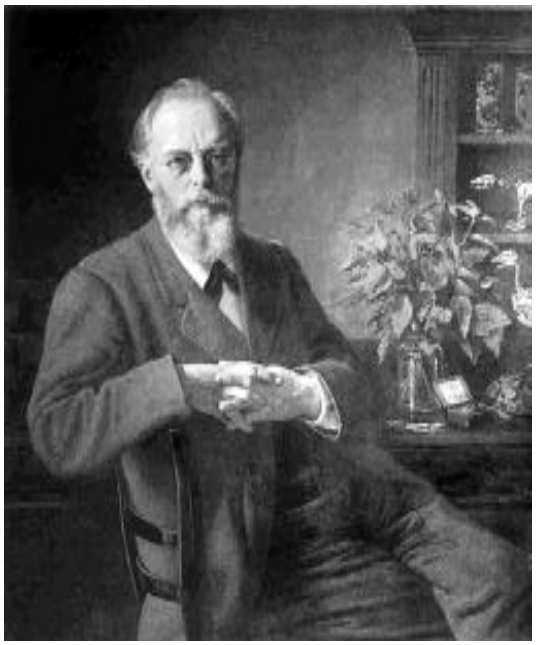

उन्नीसवीं सदी जीव विज्ञान में काफी उथल-पुथल की गवाह रही है। चार्ल्स डार्विन और अल्फ्रेड वालेस द्वारा जैव विकास की क्रियाविधि प्रतिपादित करने के बाद जीव विज्ञान का हुलिया बदलने लगा था। उससे पहले ज़्यां बैप्टिस्टे डी लैमार्क ने भी जैव विकास का अपना सिद्धांत प्रस्तुत किया था। इनके अलावा सृष्टिवादियों की अपनी धारणाएं थीं। इस बहस में वाइसमैन का योगदान निहायत निर्णायक माना जा सकता है।

मूलतः ईसाई धर्मावलंबी सृष्टिवादियों का मत था कि इस संसार व सजीवों समेत इसकी समस्त रचनाओं की रचना ईश्वर ने की है। यानी एक बार में पूरी सृष्टि की रचना हुई है और इसकी क्रियाविधि को समझने की कोशिश ही बेमानी है। लेकिन धरती पर परिवर्तनों के तमाम सबूतों के मद्देनज़र यह मानना ज़रूरी हो गया था कि हमारी धरती हमेशा से ऐसी नहीं रही है। यह भी पता चलने लगा था कि सजीवों के जो रूप आज हम देखते हैं, वे अतीत में शायद थे ही नहीं या बहुत अलग रूप में थे। यह भी स्पष्ट हो चला था कि अतीत में पाए जाने वाले कई जीव आज इस धरती पर नहीं पाए जाते। यानी स्थायित्व नहीं, परिवर्तन प्रकृति का नियम लगने लगा था। इन सब प्रमाणों के चलते जीवजगत में क्रमिक विकास की धारणा ज़ोर पकड़ने लगी थी।

लैमार्क ने इस जैव विकास की क्रियाविधि को स्पष्ट करते हुए यह सिद्धांत प्रतिपादित किया था कि हरेक जीव अपने पर्यावरण में जीने के लिए कई रणनीतियां अपनाते हैं। इस दौरान उनके शरीर के कुछ अंगों का ज़्यादा उपयोग होता है, तो कुछ का कम। जिन अंगों का ज़्यादा उपयोग होता है वे विकसित हो जाते हैं जबकि जिन अंगों का उपयोग नहीं होता वे धीरे-धीरे लुप्त हो जाते हैं। यानी लैमार्क के मुताबिक कोई जीव अपने जीवनकाल में जो लक्षण अर्जित करता है, वे उसकी संतानों को मिल जाते हैं और यही जैव विकास का आधार है।

चार्ल्स डार्विन अपने विस्तृत अध्ययनों के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि जीवों में कुदरती रूप से भरपूर विविधता पाई जाती है। यानी एक ही प्रजाति के सारे जीव भी एकदम एक जैसे नहीं होते। उनमें छोटे-मोटे अंतर होते हैं। इनमें से कुछ अंतर वंशानुगत होते हैं। यानी ये अगली पीढ़ी को मिल सकते हैं। इनमें से कुछ अंतर ऐसे भी होते हैं जो उस जीव को जीवनयापन में थोड़ी सुविधा या दिक्कत

प्रदान करते हैं। ये छोटे-छोटे अंतर ही पीढ़ी-दर-पीढ़ी संग्रहित होते हैं और जैव विकास का आधार बनते हैं। अलबत्ता, डार्विन यह स्पष्ट नहीं कर पाए थे कि यह विविधता पैदा कैसे होती है। मेंडल ने अनुवांशिकी के अपने नियम प्रस्तुत तो कर दिए थे मगर किसी ने उन पर ध्यान नहीं दिया था।

वाइसमैन ने पहले तो सृष्टिवाद पर विचार किया। उनका विचार करने का तरीका गौरतलब है। उन्होंने शुरुआत यहां से की कि संभव है कि सृष्टिवाद या जैव विकास में से कोई एक सही हो। फिर वे विभिन्न उदाहरण लेकर देखते थे कि इन दो सिद्धांतों में कौन-सा बेहतर व्याख्या कर सकता है। उस समय लिखी अपनी पुस्तक *उबेर डी बेरेक्टिगुंग डेर डारविनसेन थियरी* (डारविन के सिद्धांत का औचित्य) में वे बताते हैं कि कई सारे जीव वैज्ञानिक तथ्य जैव विकास के सिद्धांत में तो एकदम फिट हो जाते हैं मगर यदि यह माना जाए कि ये सृष्टिवादी क्रिया के परिणाम हैं तो बात उलझ जाती है।

इस पुस्तक को लिखने के बाद वाइसमैन इस बात के कायल हो गए थे कि जैव विकास उसी स्तर का तथ्य है जिस स्तर पर सूर्य-केंद्रित ब्रह्मांड की सच्चाई है। इसके बाद वाइसमैन ने जैव विकास की क्रियाविधि पर विचार किया। इसमें उन्होंने एक बार फिर वही तरकीब अपनाई - जीव विज्ञान के उपलब्ध तथ्यों की व्याख्या लैमार्क व डार्विन के विचारों के आधार पर करना।

दरअसल शुरू-शुरू में वाइसमैन मानते थे कि किसी जीव के जीवन में अर्जित लक्षण अगली पीढ़ी को हस्तांतरित होते हैं और यही विकास का आधार होता है। यानी इस मामले में वे लैमार्क के समर्थक थे। उनका भी मत था कि पर्यावरण में बदलाव हो, तो सजीवों के रूप में परिवर्तन आता है और यही परिवर्तन लंबे समय में स्वरूप में व्यापक परिवर्तनों की शक्ल अख्तियार कर लेता है। मगर 1883 आते-आते उनके विचारों में आमूल बदलाव आया। यह परिवर्तन खुले दिमाग का परिणाम माना जा सकता है।

एक बार फिर उन्होंने पाया कि जीव विज्ञान के तथ्यों की व्याख्या लैमार्क के सिद्धांत के आधार पर नहीं की जा सकती जबकि डार्विन का सिद्धांत और स्वयं उनके द्वारा विकसित किया गया जर्म प्लाज़्म का सिद्धांत इनकी व्याख्या आसानी से कर देता है। जर्म प्लाज़्म की चर्चा हम थोड़ी देर में करते हैं। इसे आधुनिक जीव विज्ञान का एक बुनियादी सिद्धांत माना जाता है।

वाइसमैन के तर्क का एक उदाहरण देखिए। चींटियों, दीमकों, मधुमक्खियों वगैरह में वंध्या सदस्य पाए जाते हैं। अर्जित लक्षणों के हस्तांतरण के आधार पर इन वंध्या सदस्यों की व्याख्या असंभव है क्योंकि ये वे सदस्य हैं जो प्रजनन करते ही नहीं। फिर इनका यह गुण अगली पीढ़ी में कैसे पहुंचता है?

लैमार्क के सिद्धांत को सही साबित करने के लिए कई उदाहरण दिए जाते थे। जैसे यह बताया जाता था कि जिन समुदायों में लिंग की अगली त्वचा को काटकर हटा देने (सर्कमसिशन) की प्रथा है, उनमें कुछ सदस्य इस त्वचा के बगैर ही पैदा होने लगे हैं। इस मुकाम पर वाइसमैन ने एक प्रयोग किया था, जो आज के मापदंडों के आधार पर क्रूरता की श्रेणी में आएगा। उन्होंने करीब डेढ़ हज़ार चूहों की पूंछ काट डालीं और अगली 20 पीढ़ियों तक उनकी संतानों की पूंछें काटते गए। मगर इक्कीसवीं पीढ़ी के सारे चूहे फिर भी पूंछवाले ही पैदा हुए थे। इस प्रयोग के आधार पर और विभिन्न उदाहरणों के विश्लेषण के आधार पर उन्होंने 1883 में एक व्याख्यान दिया था - *ऑन इनहेरिटेन्स* (अनुवांशिकता बाबत)।

रोचक बात यह है कि इस व्याख्यान में उन्होंने जर्म प्लाज़्म सिद्धांत के आधार पर डार्विन के सिद्धांत की व्याख्या भी की थी। खास तौर से उन्होंने अवशिष्ट अंगों की व्याख्या के लिए जर्म प्लाज़्म सिद्धांत का उपयोग किया था। यह बात रोचक इसलिए है क्योंकि जर्म प्लाज़्म का सिद्धांत डार्विन के प्रजनन सम्बंधी विचारों के विपरीत था। आइए अब जर्म प्लाज़्म सिद्धांत पर ही चर्चा करते हैं।

जर्म प्लाज़्म सिद्धांत

वैसे जिनेटिक रूप से परिवर्तित जीवों और जैव विविधता वगैरह के संदर्भ में जर्म प्लाज़्म आजकल काफी प्रचलित

जुम्ला हो गया है। यह अवधारणा आधुनिक जीव विज्ञान की एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण अवधारणा है। लैंगिक प्रजनन के दौरान होता यह है कि जीव के गुण अगली पीढ़ी को मिलते हैं। यह कैसे होता है? इसकी समझ धीरे-धीरे ही विकसित हुई थी। मसलन, एक विचार यह था कि प्रत्येक जीव में जो प्रजनन सम्बंधी कोशिकाएं होती है, उनमें उस जीव का एक लघु रूप मौजूद रहता है जो बाद में विकसित होकर पूरा जीव बन जाता है। इसे पूर्व-निर्माण या प्री-फॉर्मेशन कहते हैं। सवाल उठता है कि यह लघु जीव कहां से आता है।

डार्विन का मत था कि किसी भी जीव (यानी बहु-कोशीय जीव) का प्रत्येक अंग कुछ पदार्थ (गेम्यूल्स) का स्राव करता है जो प्रजनन अंगों में पहुंचता है। हरेक अंग से प्राप्त पदार्थ से ही जीव का लघु रूप निर्मित होता है। इस विचार को पैनजिनेसिस कहते हैं।

उस समय कोशिकाओं पर कई वैज्ञानिक कार्य कर रहे थे। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में कोशिका विभाजन की खोज हुई, यह पता चला कि कोशिका विभाजन दो तरह का होता है - एक में गुणसूत्रों की संख्या नहीं बदलती, जबकि दूसरे में गुणसूत्रों की संख्या आधी रह जाती है। पहले किस्म के कोशिका विभाजन को मायटोसिस कहते हैं जबकि दूसरे किस्म को मियोसिस कहते हैं। प्रजनन क्रिया में शुक्राणु व अंडाणु का निर्माण मियोसिस के द्वारा होता है। यह वाइसमैन का मौलिक योगदान था कि उन्होंने मियोसिस का सम्बंध प्रजनन व अनुवांशिकता से देखा।

मियोसिस द्वारा निर्मित प्रजनन कोशिकाओं यानी जन्यु को उन्होंने जर्म कोशिका नाम दिया और बताया कि गुणों का हस्तांतरण सिर्फ जर्म कोशिकाओं के माध्यम से होता है। जीव की अन्य कोशिकाएं (कायिक कोशिकाएं) इसमें कोई योगदान नहीं देतीं। अर्थात जर्म कोशिकाओं में मौजूद अनुवांशिक पदार्थ ही अनुवांशिकता के लिए ज़िम्मेदार है।

वाइसमैन ने यह भी स्पष्ट किया कि जर्म कोशिकाएं पूरे जीव का निर्माण कर सकती हैं, यानी वे जर्म कोशिकाओं का निर्माण भी कर सकती हैं और शरीर की समस्त कायिक कोशिकाओं का निर्माण भी कर सकती हैं। इसका मतलब है कि जर्म कोशिकाएं अगली पीढ़ी के जीव की रचना पर असर डालती हैं। यदि पर्यावरण का असर जर्म कोशिकाओं पर हो, तो वह अगली पीढ़ी की कायिक कोशिकाओं में नज़र आएगा। मगर यदि कायिक कोशिकाओं में कोई परिवर्तन हो, तो वह जर्म कोशिकाओं को प्रभावित नहीं करता और लिहाज़ा इसका अगली पीढ़ी पर कोई असर नहीं दिखता। दूसरे शब्दों में, यह एकांगी प्रभाव है। इसे *वाइसमैन अवरोध* भी कहते हैं। यह आधुनिक जैव विकास सम्बंधी समझ के मूल में है।

वाइसमैन ने जब यह सिद्धांत प्रतिपादित किया था, उस समय तक मेंडल के अनुवांशिकी के नियमों को फिर से खोजा नहीं गया था। जब उन्नीसवीं सदी के अंतिम वर्षों में ये नियम सबके सामने आए, तो वाइसमैन इनके साथ तालमेल न बना सके मगर उनके अनुयायियों ने जल्दी ही जर्म प्लाज़्म सिद्धांत और मेंडल के नियमों का सम्बंध देख लिया।

बहरहाल, जर्म प्लाज़्म सिद्धांत विकसित करते हुए वाइसमैन कई मामलों में गच्चा भी खा गए। जैसे 1885 में उन्होंने यह मत व्यक्त किया कि एक-कोशिकीय भ्रूण में जब विभाजन होता है तो उससे बनने वाली दो कोशिकाओं में आधा-आधा जर्म प्लाज़्म ही जाता है। यानी प्रत्येक कोशिका विभाजन के साथ जर्म प्लाज़्म की मात्रा कम होती जाती है। जब यह मात्रा बहुत कम हो जाती है तो कोशिका की और साथ में जीव की भी मृत्यु हो जाती है। दरअसल, वाइसमैन पूर्व-निर्धारित मृत्यु (प्रोग्राम्ड डेथ) की व्याख्या करने का प्रयास कर रहे थे। डार्विन और स्वयं वाइसमैन के मुताबिक जीवों की मृत्यु का जैव विकास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनके अनुसार जब कुछ जीव मरकर जगह खाली करेंगे, तभी तो नए (ज़्यादा विकसित जीवों) के लिए संसाधन उपलब्ध होंगे। वैसे उस समय के अधिकांश जीव वैज्ञानिकों ने इस विचार पर आपत्तियां दर्ज़ की थीं।

वाइसमैन के इस विचार की पुष्टि प्रयोग से करने का काम एक अन्य जीव वैज्ञानिक विलियम रूक्स ने किया। रूक्स ने मेंढक (*राना एस्क्यूलेंटा*) का भ्रूण लिया जिसमें अभी दो कोशिकाएं ही बन पाई थीं। उन्होंने एक गर्म सुई चुभोकर एक कोशिका को नष्ट कर दिया। जब इस भ्रूण का विकास हुआ तो कई अंग नहीं बने थे। रूक्स का कहना

था कि भ्रूण में जब एक कोशिका से दो बनी थीं, तो उनमें आधा-आधा जर्म प्लाज़्म ही पहुंचा था, इसलिए एक कोशिका को नष्ट करने पर बची हुई कोशिका के आधे जर्म प्लाज़्म से आधा-अधूरा जीव विकसित हुआ। इसे वाइसमैन के विचारों की पुष्टि माना गया।

मगर कुछ अन्य वैज्ञानिकों को इसमें संदेह था और उन्होंने अपने ढंग से इस प्रयोग को दोहराया। जैसे हान्स एडोल्फ एडवर्ड ड्राइश ने मेंढक की बजाय समुद्री अर्चिन पर यह प्रयोग किया। उन्होंने अर्चिन का एक दो-कोशिकीय भ्रूण लिया और उसे नमकीन पानी में रखकर खूब हिलाया। इस तरह से भ्रूण की दो कोशिकाएं अलग-अलग हो गईं। इन दोनों को विकसित होने दिया गया तो पूरी तरह सामान्य अर्चिन बने। यानी दोनों कोशिकाओं में पूरा जर्म प्लाज़्म था। ऐसा लगता है कि रूक्स के प्रयोग में गर्म सुई ने दूसरी कोशिका को भी प्रभावित किया था।

अलबत्ता जर्म प्लाज़्म का सिद्धांत विकसित होता गया और इसने लैमार्क के अर्जित गुणों के हस्तांतरण को हमेशा के लिए दफन कर दिया। जर्म प्लाज़्म सिद्धांत आगे चलकर क्लोनिंग का भी आधार बना। क्लोनिंग के मूल में यह बात है कि शरीर की प्रत्येक कोशिका में पूरा जर्म प्लाज़्म मौजूद होता है।

कुल मिलाकर वाइसमैन का यह सबसे महत्त्वपूर्ण व निर्णायक योगदान इन शब्दों में व्यक्त किया जा सकता हैः बहुकोशिकीय जीवों में जर्म कोशिकाओं में अनुवांशिक सूचना होती है और कायिक कोशिकाएं सामान्य शारीरिक कार्य सम्पन्न करती हैं। जर्म कोशिकाओं पर न तो पर्यावरण का असर होता है और न ही जीव के जीवन काल में सीखने या अन्य शारीरिक परिवर्तनों का कोई असर होता है। कायिक कोशिकाओं की ये सूचनाएं उस जीव के साथ गुम हो जाती हैं। ***(स्रोत फीचर्स)***